Gyanvividha, Vol.-3; Issue-4 (Oct.-Dec.) 2026 : PP-22-25

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान विषयों की अंतर्राष्ट्रीय सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध-पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
Impact Factor-8.002 (SJIF)
Vol.-3; Issue-4 (Oct.-Dec.) 2026
Page No.- 22-25
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :
डॉ. राकेश रामावत
वरिष्ठ शिक्षक (अंग्रेजी),
रा.उ.मा.वि. पडासला कलाँ, बिलाड़ा (जोधपुर)

Corresponding Author :
डॉ. राकेश रामावत
वरिष्ठ शिक्षक (अंग्रेजी),
रा.उ.मा.वि. पडासला कलाँ, बिलाड़ा (जोधपुर)

आधुनिक हिन्दी पद्य साहित्य में विहग वर्णन के व्यापक निहितार्थ

शोधसारांश – आधुनिक हिन्दी पद्य विधाओं में विभिन्न पक्षियों के क्रियाकलपों एवं व्यवहार का यथेष्ट रूप में उल्लेख हुआ है। दोहा–सोरठा, छप्पय–कुण्डलिया, सवैया आदि मध्ययुगीन काव्यविधाओं के साथ आधुनिक हिन्दी काव्य में मुक्तक, गीत, नवगीत, छंदमुक्त कविता, लम्बी कविता एवं गजल–रूबाई, सोनेट आदि आयातित विधाओं में भी कवियों ने यथावसर विभिन्न पंछियों के अनूठे ब्यौरे प्रस्तुत करते हुए कथावस्तु को सहजबोधगम्य बनाने में सफलता अर्जित की है। इस शोधपत्र में ऐसे ही कतिपय प्रतिनिध–उदाहरणों के आलोक में विहंग–वर्णन के व्यापक निहितार्थों पर प्रकाश डाला गया है।

कुंजीशब्द – हंसदूत, चिड़ियाघर, मर्त्यनीड़, स्वतंत्रतापिपासु, मुकितमानी, पंजरबद्ध।

हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल का श्रीगणेश भारतेन्दु युग से माना जाता है। एक ओर जहाँ भारतेन्दुयुगीन कविता में विषयवैविध्य भी है, वहीं दूसरी ओर जनसाहित्य का प्रकटीकरण भी है, इसमें सरल एवं प्रभावी व्यंजनाप्रद, 'पारंपरिक छंदों' के साथ नूतन काव्यरूपों का समादर है।

भारतेन्दुयुगीन कवियों ने अपनी विभिन्न रचनाओं में पक्षियों के अनेक मौलिक संदर्भ प्रयुक्त किए हैं। संस्कृत वाड्.मय में सन्देश–काव्य (दूतकाव्य) की परंपरा रही है जो लोकसाहित्य में भी झलकती है। ठाकुर जगमोहनसिंह ने 'मेघदूत' का अनुवाद किया तो 'हंसदूत' शीर्षक से स्वतंत्र काव्य की भी रचना की।[1] भारतेन्दु युग में एक समर्थ लेखक का तो नाम ही बाबू तोताराम था। पक्षियों के नाम से आज भी बालकों के नामकरण की परंपरा लोक में विद्यमान है। यथा सुवालाल, मीठूराम, पपाराम, चिड़ियानाथ, हंस भारती राजस्थान की कुछ जातियों में काग, काबरा, मोरिया (मौर्य) आदि गोत्र प्रचलित है जो पक्षी विशेष पर केंद्रित रहे हैं।

द्विवेदीयुग भाषा, विषय, राष्ट्रीयता आदि विभिन्न आधारों पर समस्त देश को एकता के सूत्र में पिरोने के लिए स्मरणीय है। खड़ीबोली का परिमार्जन इसी द्विवेदी युग की महती देन है। द्विवेदीयुगीन कवियों ने भी मौलिक उद्भावनाओं से लबालब पक्षियों के सार्थक संदर्भ प्रस्तुत किए हैं। पं. हरिशंकर शर्मा कविरत्न ने 'चिड़ियाघर' शीर्षक से काव्य रचना लिखी। छायावाद काल में भी कवियों ने पक्षियों के बहुपक्षीय विवरणों पर रोचक पंक्तियों की रचना की। महादेवी वर्मा ने पालतू मयरों पर लंबे संस्मरण व रेखाचित्र प्रस्तुत किए थे।

सूर्य की पहली किरण का उदय पंछियों की मधुर ध्वनि से ही होता है। आधुनिक काल के प्रसिद्ध कवि सुमित्रानंदन पंत ने तो उनकी अति प्रसिद्ध रचना 'प्रथम रश्मि' में हमारी सुबह ही पक्षियों के कलरव से होने की बात को बड़ी सुंदरता पूर्वक प्रस्तुत किया है। प्रकृति चित्रण में निष्पात् सुकुमार कवि पंत ने पक्षियों के बच्चों की अनुभूतियों के ब्याज से लिखा है –

''प्रथम रश्मि का आना रंगिणि !
तूने कैसे पहचाना ?

कहाँ, कहाँ हे बाल–विहंगिनि !

प्रस्तुत काव्य में पन्त जी ने पक्षी को रंगिणि, बाल–विहंगिनि!, तरु–वासिनि!, अंतर्यामिनि! जैसे रूपक से उसके विविध रूप दिखाए हैं। सूर्य के प्रथम किरण के साथ ही हमारी दुनिया मानो जीवंत हो उठती है और इसका आगाज सर्वप्रथम हमें पक्षियों के कलरव से चलता है ।''[2] स्वातंत्र्योत्तरपूर्व एक आदिवासी केंद्रित हिन्दी उपन्यास का शीर्षक भी 'वन–विहंगिनी' (आदिवासी वनिता) ही रखा गया था।

प्रकृति के सुकुमार कवि पंतजी ने मनुष्य को ईश्वर की सर्वोत्तम कृति मानते हुए भी तुलना के तौर पर अपनी बात विहग की सुन्दरता से ही प्रारंभ की है–

'सुन्दर विहग हो तुम मनुष्य तुम सब से सुन्दर हो।

स्पष्ट है कि यहाँ पंतजी ने 'गीत विहग' में गीत को पक्षी का रूपक दिया है–

मै, गीत विहग, निज मर्त्य नीड़ से उड़कर / चेतना गगन में मन के पर फैलाता।''[3]

आधुनिक युग की मीरां के रूप में लोकप्रिय कवयित्री महादेवी वर्मा की कविताओं सहित संस्मरणों में भी पक्षियों के हृदयस्पर्शी विवरण मिलते हैं। 'मेरा परिवार' शीर्षक संस्मरण (रेखाचित्र) में वह लिखती है–

''नीलकंठ और राधा की सबसे प्रिय ऋतु तो वर्षा ही थी। मेघों के उमड़ आने से पहले ही वे हवा में उसकी सजल आहट पा लेते थे और तब उनकी मन्द्र केका की गूंज– अनुगूँज तीव्र से तीव्रतर होती हुई मानो बूँदों के उतरने के लिए सोपान–पंक्ति बनने वाली थी।''[4] इसी तरह महादेवी वर्मा की विभिन्न रचनाओं में विहग–वर्णन अत्यंत ही मनोरम बन पड़ा है।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने पारंपरिक काव्यरूढ़ि को नूतन संस्पर्श देते स्वतंत्रतापिपासु प्रजा को 'चातक' मानते हुए छायावादी प्रभावानुरूप लिखा है–

'निकली रही है उर से आह / ताक रहे सब तेरी राह।

चातक खड़ा चोंच खोले हैं, संपुट खोले सीप खड़ी

मैं अपना घट लिए खड़ा हूं, अपनी अपनी हमें पड़ी।'[5]

ठीक इसी प्रकार जयशंकर प्रसाद कृत 'लहर' में एक गीति में अत्यन्त आलंकारिक ढ़ंग से पक्षियों के झुण्ड का चित्रण किया गया हैः–

बीती विभावरी जाग री।

अंबर पनघट में डुबो रही, ताराघट उषा नागरी

तू अब तक सोई है आली, आंखों में भरे विहाग री।[6]

यहाँ 'खगकुल' की चहचहाट (कुल–कुलनाद) के संदर्भ में 'विहाग' शब्द की संगति देखते ही बनती है। 'विहग' शब्द की व्यंजकता हमें 'विहाग' में अन्तर्निहित प्रतीत होती है।

कवि सुमित्रानंदन पंत ने निराला जी की कविता में साक्षात् सरस्वती की प्रतिमा के दर्शन किए हैं। वे लिखते हैं कि कल्पना की 'उड़ान' और 'हंस–वाणी' से युक्त काव्य बड़ा ही मनोहर है –

शुभ्र कल्पना की उड़ान भव भास्कर कलरव।

हंस अंश वाणी के तेरी प्रतिभा नित नव।

जीवन के कर्दम से अमलिन मानस सरसिज।

शोभित तेरा शारदा का आसन निज।।[7]

कवि रामकुमार वर्मा ने प्राकृतिक सौन्दर्य से अभिभूत होकर कोयल के नैसर्गिक गान के अनिर्वचनीय प्रभाव के बारे में लिखा है–

'तुम सजीली हो सजाती हो सुहासिनी से लताएँ।

क्यों न कोकिल कंठ मधु ऋतु में तुम्हारे गीत गाएँ।[8]

राष्ट्रीय आन्दोलन के दौर में हिन्दी कवियों ने पक्षियों के उदाहरणों से स्वातन्त्र्य की ललक जगाने के स्तुत्य प्रयास भी किए। ''आधुनिक काल में मैथिलीशरण गुप्त ने साकेत के नवम् सर्ग में राजमहल के पिंजड़ों में बंद पक्षियों और उन्हें मुक्त करने का वर्णन मिलता है। सखि विहग, उड़ा दे, हों सभी मुक्तिमानी, सुन शठ शुक–वाणी 'हाय' ! रूठो न रानी। खग, जनकपुरी की ब्याह दूँ सारिका मैं। तदपि यह वहीं की त्यक्त हूँ दारिका मैं?''[9]

गुप्त जी ने अपनी एक कविता में पिंजरे में बंद तोते की व्यथा के दृष्टांत से पराधीन भारतीय की असीम वेदना का चित्रण किया। यह कविता कालांतर में 'पंजरबद्ध शुकः' शीर्षक से 'संस्कृत प्रतिभा' पत्रिका के संपादक द्वारा अनूदित की गई। 'एक भारतीय आत्मा' कविनाम (उपनाम) से लिखने वाले माखनलाल चतुर्वेदी की कविता 'कैदी और कोकिला' भी राष्ट्रीय आन्दोलन के दौर में अत्यन्त चर्चित रही।

प्रगतिवादी काव्यधारा के कवियों की रचनाओं में पंछियों के यथाप्रसंग उल्लेख तो मिलते ही हैं, उनके अनेक काव्य संग्रहों के शीर्षक भी पंछी–केंद्रित है यथा नरेन्द्र शर्मा कृत 'हंसमाला' (1946), केदारनाथ अग्रवाल कृत 'पंख और पतवार' (1979), नागार्जुन कृत 'सतरंगे पंखों वाली' (1959) आदि। डॉ. शिवकुमार शर्मा के अनुसार ,''प्रगतिवादी कवि क्रान्ति के उन प्रलयंकारी भैरव स्वरों का आह्वान करता है जिनसे जीर्ण–शीर्ण रूढ़ियां या परम्परायें किसी गहन अनल में सदा के लिए विलीन हो जायें। प्रगतिवादी कवि पूंजीपतियों के गगनचुम्बी महलों को भूमिसात देखना चाहता है। यथा–

आ कोकिल बरसा पावक कण

नष्ट–भ्रष्ट हो जीर्ण–पुरातन।[10] (पन्त)

भक्तकवि सूरदास ने गोपी–उद्धव संवाद में 'मेरे हरि हारिल की लकरि' कहकर हारिल पक्षी की दृढ़निश्चयी प्रवृत्ति की ओर संकेत किया था, आधुनिक युग में कवि अज्ञेय ने उसी से अनुप्रेरित होते हुए वर्तमान संदर्भ में आह्वान किया –'उड़ चल हारिल, लिये हाथ में यही अकेला ओछा तिनका।'[11] इसी प्रकार आधुनिक हिन्दी पद्य–रचनाओं में पक्षियों से संबंधित पारम्परिक अलंकारपरक प्रतिमानों को समकालीन परिदृश्य से जोड़ते हुए नूनतभाव भरा गया है।

नयी कविता के दौर में भी कवियों ने विभिन्न पक्षियों के स्वभावादि को अलंकार और को नूतन प्रतीक बिम्बादि के रूप में प्रस्तुत किया। अनेक कवियों की कविताओं के शीर्षक एवं काव्यसंग्रहों के शीर्षक में भी पक्षियों का उल्लेख हुआ है। त्रिलोचन शास्त्री कृत 'गुलाब और बुलबुल'[12] शीर्षक काव्यकृति में रूबाइयां एवं गजल विधा की रचनाएं हैं।[13] हिन्दी एवं उर्दू गजल में चमन और बुलबुल, गुलशन आदि प्रतीकों का भूरिशः प्रयोग हुआ है। मरूधरा के वयोवृद्ध दिव्यांग हिन्दी गजलकार भानुमित्र की गजलों में भी बीसियों पक्षियों के हृदयस्पर्शी संदर्भ मिलते हैं।

नरेश मेहता ने 'वनपाखी सुनो' काव्यकृति में खग को सम्बोधित करते हुए झकझोर कर रख देने वाली आत्माभिव्यक्ति की है।[14] नयी कविता में विहग–विषयक तत्सम शब्दावली का भी सुन्दर सुष्ठ प्रयोग हुआ है। तीसरे सप्तक के प्रयागनारायण त्रिपाठी लिखते हैं –''सुख तो अनेक दिए पगडण्डी ने/प्रसन्न फूल, झरने, असंख्य घन, घाटियाँ/प्रफुल्ल खग, अभिनव अरूणोदय, अनुरंजित नभ।''[15] लोकजीवन से गहन संसक्त शब्दावली भी प्रयुक्त हुई है–

चोटी ऊपर दिया चमकता/माथे कुँदन बोर–सा
नीली रात चँदोवे वाली/पंख गिरा ज्यों मोर का।[16]

यहां मोर के पंख में विद्यमान चंद्राकर आकृति का कितना मौलिक निरूपण हुआ है। नयी कविता के दौर में प्रयोगवाद से अप्रभावित परंतु नवस्वच्छन्दतावाद और अंशतः छायावाद से प्रभावित तीसरे सप्तक की कवयित्री कीर्ति चौधरी शालीनतापूर्वक प्रणय–भाव और काम–कौतूहल को पक्षी संदर्भ से जोड़ती है–'दिन बीते कभी इस शाख पर/किसी कोयल को कूकते सुना था। तब से जब भी इस ओर आती हूँ बार–बार कानों में वही कुहू/गूंजती हुई पाती हूँ। जैसे मेरे मन के लिए एक बार का पा लेना ही हमेशा की थाती है।'[17] यहां प्रेम के परिपाक और प्रेमी के स्थायी मिलन के संदर्भ कोकिलगान की व्यंजकता फलीभूत हुई है।

इन पंक्तियों को पढ़ते हुए बरबस ही निश्चल प्रेम के कवि घनानंद का स्मरण हो आता है–

कारी कूर कोकिला कहां को बैर काढती री,
कूकि कूकि तू हू करेजी किन कोरि लै ?

अर्थात् रीतिकालीन विहग–वर्णन का असीम प्रभाव आधुनिक काव्यविधाओं पर भी पड़े बिना नहीं रहा। नवगीत के दौर में गीतिकाव्य के विभिन्न तत्त्वों यथा भावात्मकता, अनुभूति की सहजता, लयात्मकता, वैयक्तिकता, एकान्विति आदि के साथ आधुनिक, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक एवं नवीन युगबोध की उपस्थिति दर्ज हुई है। नवगीतों में नूतन बिंबयोजना पर तो कुछ विशेष ही ध्यान दिया गया। अनेक नवगीतकारों की रचनाओं के शीर्षकों में तो खग–कलरव ही बड़े कर्णप्रिय ढ़ंग से गुंजायमान है यथा गोपालसिंह नेपाली कृत 'पंछी', अनूप अशेष कृत 'लौट आयेंगे सगुन पंछी', देवेंद्र शर्मा 'इन्द्र' कृत 'पंख कटी मेहराबें' आदि।[18] अनेक नवगीतों में तो पूरे के पूरे किसी पंछी के समाजशास्त्रीय दृष्टि से चिंतन पर ही लिखा गया है।

नवगीतकार उमाकान्त मालवीय ने लोकतंत्र में राजनेताओं के थोथे वादों को प्राचीनकालीन लोकप्रिय 'तोता मैना किस्से' की संज्ञा दी हैः–

बड़े–बड़े आश्वासन है, तोता मैना के किस्से
लाठी, गोली, अश्रुगैस, इतना ही जन के हिस्से।[19]

आज परिस्थितियाँ इतनी प्रतिकूल होने लगी है कि उदीयमान नवगीतकार श्याम अंकुर को लिखना पड़ा हैः–

'गीत कौअे गाने में लीन/मन तुलसी का हुआ मलीन।'[20]

रामकिशन चौरसिया अमराई में कोयल की कूक संबंधी काव्यरूढि को परिवर्तित रूप प्रदान करते हुए लिखते हैं–

'नैन मेरे वर्ष भर जलधार ढ़ाते हैं,
पर कभी कोयल न बोली, मौन अमराई।[21]

यहां पक्षी के व्यवहार में आने वाले परिवर्तन के पीछे परिवेशगत बदलाव के प्रभाव की ओर संकेत है। किशोरीलाल त्रिवेदी ने कटु सामाजिक यथार्थ पर प्रकाश डालते हुए लिखा हैः–

'दब रहे हैं हाथियों के पाँव से मयूर,
बिक रहे हैं कोयलों के भाव में कपूर।[22]

यहां रेखांकित शब्द 'कोयल' नहीं 'कोयला' है। साठोत्तरी हिंदी कविता के क्षेत्र में मुख्यतः तीन प्रकार के काव्यांदोलन माने गए हैं। 1. निषेधमूलक कविता 2. संघर्षमूलक कविता एवं 3. आस्थामूलक कविता। इनमें भी अनेक 'भेद–प्रभेदों' के अन्तर्गत कवियों को रचनाओं को उपवर्गीकृत किया गया है। साठोत्तरी हिंदी कविता के दौर में गद्य रचनाकारों की कृतियों के शीर्षकों में भी पक्षियों की चहचहाट एवं उनकी आर्त पुकार दोनों ध्वनित हुई है। यथा उदयप्रकाश कृत 'अबूतर–कबूतर', शीलकृत 'लाल पंखों वाली चिड़िया' आदि।[23]

समकालीन कविता का विषय क्षेत्र भी प्रचुर व्यापकता लिए हुए हैं। अति आधुनिकता के परिवेश में विभिन्न विसंगतियों के बारे में कवियों ने गंभीरतापूर्वक रचनाएं लिखी है। वैश्वीकरण, उदारीकरण, भूमंडलीकरण, बाजारवाद,

विश्वबाजार, मुक्त व्यापार संधि, ग्लोबलाइजेशन आदि तमाम तथ्यों को उपनिवेशवादी–पूंजीवादी गिद्धदृष्टि के रूप में देखने वाली समकालीन कविता के तेवर अत्यन्त प्रखर है। अनेक कवियों ने पक्षियों का उल्लेख बड़े रोचक ढंग से किया है।

पूंजीवादी दुष्चक्रों से हमारी अस्मिता संकट में है। कवि ज्ञानेन्द्रपति ने जनता को जगाने वाले मुर्गे की बांग का आश्रय लेकर लिखा हैः–

''बस्तर में अपना बिस्तरा/बिछाना चाहता है स्वार्थ लोलुप उद्योगपति/बरजती है उसे कड़कनाथ की कुकड़ कूँ/जो जगाती है गाँव को मुंह अंधेरे/ताकि वह अपनी पहचान बचा ले।[24] यहां झारखण्ड अंचल की स्थानीय मुर्गा–प्रजाति 'कड़कनाथ' का उल्लेख हुआ है।

उल्लेखनीय है कि लोकबाबू के आदिवासी उपन्यास 'बस्तर–बस्तर' (2021) में इस प्रजाति के मुर्गे की साहसिक क्षमताओं की प्रशंसा की गई है। इसके पंख, कलगी, मांस–खून भी काला होता है।[25]

समकालीन कविता को 'त्रासदी की घटना' की संज्ञा देते हुए चंद्र देवताले 'सिर्फ एक संशय' शीर्षक कविता में लिखते हैंः–

'आकाश का कलेजा/जख्मी अबाबिल की तरह/ब्रह्माण्ड में लटक आया है।'[26]

अबाबील एक पक्षी की प्रजाति है। कहानीकार सारा राय ने अपने एक कहानी संग्रह का शीर्षक ही चुना है–'अबाबील की उड़ान।' अनेक कवियों ने शाहीन, बाज, परिन्दा, ऊकाव आदि फारसी–उर्दू शब्दावली के रूप में पक्षी–चित्रण प्रस्तुत किए हैं।

निष्कर्ष – आधुनिक हिन्दी की पद्य–विधाओं में विहग–वर्णन व्यापक वितान में विस्तृत है। पक्षीविशेष पर केंद्रित रचनाओं के अलावा कविता में यथास्थान विभिन्न पक्षियों के आवसरिक उल्लेख तो हजार बार से ज्यादा ही हुआ है। यह सही बात है कि कवियों का ध्येय किसी पक्षी विशेष का पक्षी वैज्ञानिक अध्ययन करना नहीं रहा है लेकिन इन रचनाओं में विद्यमान विहग–वर्णन के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, सामरिक दृष्टियों से व्यापक निहितार्थ की ओर समीक्षकों की दृष्टि गई है और प्रकीर्णरूपेण अनेक शोधपत्रों में इस तथ्य को प्रस्तुत किया गया है।

संदर्भ –

1. हिन्दी साहित्य, डॉ. विवेक शंकर, पृ. 209
2. लूर, पक्षी लोकगीत विशेषांक, डॉ. जयपाल सिंह राठौड़ (संपादक), पृ. सं. 50
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. बहादुर सिंह, पृ. सं. 403
4. मेरा परिवार, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 2008, पृ. सं. 28
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. बहादुर सिंह, पृ. सं. 402
6. वही, पृ. सं. 402
7. हिन्दी साहित्य, युग और प्रवृत्तियां, डॉ. शिवकुमार शर्मा, पृ. सं. 509
8. वही, पृ. सं. 512
9. साकेत, मैथिलीशरणगुप्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2012, पृ. 19
10. हिन्दी साहित्य, युग और प्रवृत्तियां, डॉ. शिवकुमार शर्मा, पृ. सं. 529
11. हिन्दी साहित्य, डॉ. विवेक शंकर, पृ. 250
12. वही, पृ. 237
13. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. बहादुर सिंह, पृ. सं. 363
14. वही, पृ. सं. 378
15. वही, पृ. सं. 390
16. शिलापंख चमकीले, गिरिजा कुमार माथुर, दिल्ली, 1961, पृ. 4
17. हिन्दी साहित्य, युग और प्रवृत्तियां, डॉ. शिवकुमार शर्मा, पृ. सं. 568
18. डॉ. विवेक शंकर, हिन्दी साहित्य, पृ. 241
19. सुबह रक्त पलाश की (कविता संग्रह), उमाकान्त मालवीय, स्मृति प्रकाशक, दिल्ली, 1976, पृ. 51
20. नवगीत मधुमती, अंक 4, ई. 1999 एवं डॉ. बहादुर सिंह, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. सं. 410
21. वही, पृ. सं. 412
22. वही, पृ. सं. 413
23. हिन्दी साहित्य, डॉ. विवेक शंकर, पृ. 247
24. अभियान पत्रिका अंक 5, पृ. 15 एवं डॉ. बहादुर सिंह, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. सं. 426
25. लोकबाबू, बस्तर बस्तर (उपन्यास) राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली, प्र.सं 2021, पृ. 34
26. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. बहादुर सिंह, पृ. सं. 430

•